UNIVERSAL
LIBRARY

OU_176886

UNIVERSAL
LIBRARY

(१०) कालिंग चक्रवर्त्ती महाराज खारवेल के शिलालेख का विवरण

[लेखक—विद्यामहोदधि श्री काशीप्रसाद जायसवाल, एम० ए०, पटना]

हिंदू-इतिहास का पुनरुद्धार आश्चर्यजनक है। गुप्त नृपेंद्रों का हाल कौन जानता था? चंद्रगुप्त मौर्य की कीर्त्ति तो विशाखदत्त के समय तक और शुंग भारतेश्वरों का वृत्त कालिदास तक जीवित था, तदनंतर ग्रंथों द्वारा हम उनको आज भी जानते हैं। पर समुद्रगुप्त, कर्ण कलचुरि और खारवेल, जो चंद्रगुप्त मौर्य और नेपोलियन से कम नहीं थे, वरन् यह कहना चाहिए कि किसी किसी बात में उनसे बढ़कर थे, उनके नाम का निशान भी हमारी ग्रंथ-राशि में नहीं है। उनका इतिहास उनके समय के लिखे, समसामयिक लेख, पत्थर या ताम्र-पत्र पर अंकित, प्रशस्तियों और चरितों से आविर्भूत हुआ है। शिलालेखों और दानपत्रों से इतिहास-ज्ञान आविष्कृत करना पुराविदों की पुरानी प्रथा है। राजतरंगिणीकार कल्हण ने अपने कश्मीर-इतिहास की रचना में इस साधन से काम लिया था, ऐसा उन्होंने स्वयं लिखा है। पुराने हिंदू राजा और पंडित इस प्रथा को जानते थे, नहीं तो भूमिदान, कुंभदान आदि मामूली मौकों पर लंबे लंबे चरित और राजकाज के कार्यों के वर्णन क्यों खोदे जाते? अथवा मंदिरों के शिखरों के नीचे और हड्डियों के साथ स्तूप के भीतर लेख निधीभूत निक्षिप्त क्यों किए जाते? यह इतिहास के चिरायु करने की शैली थी। अशोक ने तो साफ लिख दिया है कि चिरायु करने, 'चिरस्थिति के लिये,' लेख पत्थरों पर खुदवा दिए।

ये शिलालेख आदि, वृत्त और चरित को प्रायः इतिहास-दृष्टि से निबद्ध करते थे; अर्थात् बीती बात या सांप्रत संक्षेप से, काव्य रूप से नहीं, तथ्य-निहित करते हुए वर्णित करते थे। डाक्टर फ्लीट ने इसे देखकर कहा है कि शिलालेख और ताम्रलेखों को देखते हुए

पुराने हिंदुओं में इतिहास लिखने की क्षमता सिद्ध होती है। पौराणिक और काव्य-वर्णनों से इन लेखों की प्रथा बिलकुल भिन्न है। इनकी परंपरा और शैली दस्तावेजी है। पूरा नाम, धाम, वल्दियत. स्थान, मिति, संवत् देते हुए अपना करण कारण विदित करते हैं।

ऐसे लेखों में आज तक जितने लेख यहाँ पाए गए हैं, उनमें कलिंग के चक्रवर्ती राजा श्री खारवेल का लेख, जो "हाथीगुंफा-लेख" के नाम से ख्यात है, अग्रगण्य है। इससे पुराना, छोटे मौर्य लेखों को छोड़कर, सिर्फ महाराज अशोक की "धर्मलिपि" शिलालेख ही है। पर ऐतिहासिक घटनाओं और जीवनचरित को अंकित करनेवाला भारतवर्ष का यह सब से पहला शिलालेख है।

यह उड़ीसा (उत्कल) के भुवनेश्वर तीर्थ के पास खंडगिरि-उदयगिरि पर्वत पर एक चौड़ी गुफा के ऊपर खुदा हुआ है। पहाड़ में काट काटकर बहुतेरे मकान बरामदेदार—जैन मंदिर और जैन साधुओं के लिये मठ स्वरूप गुफा-गृह वहाँ प्राचीन काल के बने हुए हैं। एक ऐसा ही महल भी पहाड़ काटकर बना हुआ है। इनमें से कई एक मकानों पर विक्रम संवत् से २०० वर्ष पूर्व के लगभग के संस्कृत अक्षरों में, जिसे ब्राह्मी लिपि कहते हैं, प्राकृत भाषा में लेख खुदे हुए हैं। इन सब को वहाँ 'गुंफा' अर्थात् गुफा कहते हैं। एक ऐसी दोमहला गुफा (वस्तुतः मकान) खारवेल की अग्र-महिषी का बनवाया हुआ है जिसे वे 'प्रासाद' कहते हैं। उसे महारानी ने कलिंग के श्रमणों के लिये बनवाया था। लेख में महारानी के पिता का नाम है और पति श्री खारवेल को "कलिंग चक्रवर्त्ती" कहा है। हाथी गुंफा लेख में जो इतिहास दिया हुआ है, उससे महाराज खारवेल ठीक ही चक्रवर्त्ती सिद्ध होते हैं। इसी लिये मैंने अँगरेजी में उन्हें Emperor लिखा है और पुराविद् डाक्टर विंसेंट स्मिथ ने इस वर्णन को मान लिया है।

हाथीगुंफा नाम आधुनिक है। यह गुहा कारीगरीवाली ही वरन् भद्दी है। मालूम होता है कि यह खारवेल के पहले

की थी और किसी कारण अधिक मान्य और प्रतिष्ठित थी, इसी से इस पर यह बहुत लंबा चौड़ा लेख लिखा गया। लेख कई अंशों में गलित हो गया है। कई पंक्तियों के आदि के कोई बारह अक्षर पत्थर के चप्पड़ के साथ उड़ गए हैं; और कई पंक्तियों में बीच बीच में अक्षर एक दम उड़ गए हैं और कहीं पानी से घिस गए हैं। कहीं कहीं अक्षर की कटानें बढ़ गई हैं और भ्रम उत्पन्न करनेवाले चिह्न जल-स्रोत तथा दूसरे कारणों से पैदा हो गए हैं। कहाँ तक छेनी की निशानी है और कहा काल-कृत भ्रम-जाल है—यही हल करना इस लेख का सामुद्रिक जानना है, उपनिषद् है या रहस्य है। काल पत्थर को भी खा जाता है, अवतारों की भी कीर्त्ति का लोप कर देता है। खारवेल के इतिहास का अंशतः लोप हो जाना कोई आश्चर्य नहीं। आश्चर्य और आनंद यही है कि दो सहस्र वर्ष के बाद भी इसका किसी कदर अस्तित्व है, और यह कि भिड़ने पर सरस्वती के प्रसाद से बीजक कुछ बोल पड़ा, चुप्पी साधनेवाले काल-ब्रह्म कुछ कह पड़े।

इस लेख की खबर १०० वर्ष के ऊपर हुए, इतिहास-संशोधक को मालूम है। पर यह सन् १९१७ के पहले पूरा पूरा पढ़ा नहीं जा सका था। पादरी स्टर्लिंग ने इसकी चर्चा सन् १८२५ में की। प्रिंसेप ने, जिसने कि पहले पहल ब्राह्मी अक्षर एक सिक्के की मदद से, जिस पर ग्रीक (यूनानी) और ब्राह्मी दोनों अक्षरों में नाम छपा हुआ था, पढ़ा था, इस लेख का अंड बंड पाठ और अर्थ किया। बाद, डाक्टर राजा राजेंद्रलाल ने सन् १८८० में दूसरा पाठ और अर्थ छापा जिसमें राजा का नाम तक ठीक न पढ़ा गया। जेनरल कनिंघम ने बड़े प्रयास से एक पाठ (सन् १८७७ में) तैयार किया, पर उसमें भी सफलता न हुई। सन् १८८५ में डाक्टर पंडित भगवानलाल इंद्रजी ने प्रथम बार एक ऐसा पाठ प्रकाशित किया कि जिससे लेख के महत्त्व का थोड़ा पता चला। पर तब तक कोई छाप इस लेख की न छपी थी,

केवल आँख से देखकर अक्षरों की नकल की गई थी। समझा गया था कि कागज पीटकर इसकी छाप उतर ही नहीं सकती। लेख का बहुत अंश पढ़ा भी न जा सका था और जो पढ़ा गया था, उसमें भी भूलें थीं। मैंने १९१३ में अपने साहित्य-सखा मि० राखालदास बनर्जी द्वारा एक पंक्ति इसकी पढ़वाई और उसका जिक्र अपने राज्य-काल-निर्णय के एक लेख में किया। इसे देख प्रसिद्ध ऐतिहासिक विंसेंट स्मिथ ने अनुरोध किया कि पूरा लेख मैं छापूँ और पढ़ूँ। साथ ही उन्होंने बनर्जी साहब को भी लिखा। पटना आने पर और वहाँ अनुसंधान समिति कायम होने पर मैंने बिहार के लाट साहब सर एडवर्ड गेट से कहा कि यह छाप मँगवाई जाय। सर एडवर्ड के लिखने पर पुरातत्त्व विभाग से पंडित राखालदास बनर्जी, मेरे मित्र, खंडगिरि भेजे गए। इन्होंने अपने और मेरे शिष्य चि० डाक्टर कालिदास नाग की मदद से दो छापें बड़ी मेहनत से तैयार कीं। इनमें एक मेरे पास आई और दूसरी डाक्टर टामस (लंडन) के पास गई। कई महीने घोर श्रम, चिंता और मनन कर मैंने लेख का पाठ और अर्थ निकाल बिहार-उड़ीसा की रिसर्च सोसाइटी के जरनल (पत्रिका) में (१९१७ में) प्रकाशित किया। छाप के प्लेट चित्र भी छापे गए। इसके पहले छाप-चित्र कभी प्रकाशित न हुए थे। योरप के ऐतिहासिक पंडितों ने तथा प्रोफेसर लैनमन ने अमेरिका में और राय हीरालाल बहादुर ने भारतवर्ष में, शिलालेख के पाठ और व्याख्या की बहुत चर्चा कर मेरे प्रयास पर मानो मान की मुहर लगा दी। इसी के बीच, वर्ष के भीतर ही, स्वयं खंडगिरि जा मैंने अक्षर अक्षर लेख को शैल-गह्वर पर मचान से पढ़ अपने पाठ को दुहरा और संशोधित कर संस्कृत-छाया के साथ परिष्कृत पाठ बिहार-उड़ीसा के शोध-जरनल की चौथी जिल्द में फिर छापा (सन् १९१८)। पर जगह जगह पर संदेह रह ही गया। इसके मिटाने को गवर्मेंट से मैंने प्रार्थना की कि लेख का एक साँचा (cast) विलायती मिट्टी (Plaster of Paris) में

उतरवाकर पटने मँगाया जाय जिसमें आसानी से यहाँ काम हो सके। इस साँचे के आने के पहले यह विचार किया गया कि मेरे नए पाठों को पहाड़ पर जा कोई दूसरे लिपिज्ञ भी जाँच लें, क्योंकि छाप में बहुत से अक्षर नहीं आ सकते थे। इसलिये गवर्मेंट ने मेरे कहने पर श्रीयुत राखालदास बनर्जी को (जो भारत के सर्वश्रेष्ठ सरकारी लिपिज्ञों में थे) खंडगिरि जाने का हुक्म दिया और सन् १९१९ में हम दोनों वहाँ गए। दोनों ने मिलकर पाठ को दुहराया। इस बार मैंने खारवेल के समकालीन एक यवन (यूनानी) राजा का नामोल्लेख देखा। इस बीच उजली मिट्टी में साँचा भी बनकर आ गया था और नई कागजी छापें भी आ गई थीं। इनसे मिलाकर १९२४ में मैंने और श्रीयुत राखालदास बनर्जी ने फिर संशोधन किए और जहाँ जहाँ मतभेद था, उसे हल किया। इन मेहनतों का फल दूसरे कार्यों के आधिक्य के कारण प्रकाशित न हो सका। सन् १९२७ में उसे प्रकट करने के पहले साँचे और छाप से फिर मैंने दुहराया। दिसंबर १९२७ में नए पाठ का प्रकाशन विहार की पत्रिका में किया गया। नए छाप-चित्र भी, जो यहाँ दिए जाते हैं, दिए गए। इस तरह १० वर्ष के बाद यह काम पूरा हुआ। पं० नाथूराम, श्री मुनि जिनविजयजी प्रभृति जैन पंडितों की राय हुई कि हिंदी में भी यह लेख और उसका भाष्य मैं छाप दूँ। कई विश्व-विद्यालयों में इस शिलालेख का मेरा पाठ शिलालेख पाठ्य-क्रम (कोर्स) में रख दिया गया है। जैन पंडितों की आज्ञा शिरोधार्य कर और छात्रों के लिये सुलभ करने के अभिप्राय से लेख को, हिंदी उल्था-सहित, सभा की पत्रिका में प्रकट करता हूँ। जैन तथा दूसरे विद्वान् मेरी भूलों को सुधारेंगे और मुझे सूचित करेंगे, यह भी मेरी आशा और प्रार्थना है। यह लेख बहुत कठिन है और पत्थर घिस जाने से, काल-कवलित-प्राय हो जाने से, कठिनाई बहुत बढ़ गई। जहाँ जो इसके पंडित हों, सब के साहाय्य का प्रार्थी हूँ कि जहाँ तक हो सके, तथ्य ढूँढ़ कर बाहर निकाला जाय।

शिलालेख का महत्त्व और उसकी मुख्य बातें

लेख का महत्त्व ऐसा है कि विंसेंट स्मिथ के भारतेतिहास के सांप्रत संस्करण में उसके संपादक ने लिखा है कि इस लेख के उद्-घाटन के कारण उस ग्रंथ का नया संस्करण करना पड़ा।

जैन धर्म का यह अब तक सब से प्राचीन लेख है। इससे ज्ञात होता है कि पटने के नंद के समय में उत्कल या कलिंग देश में जैन धर्म का प्रचार था और जिन की मूर्त्ति पूजी जाती थी। कलिंग-जिन नामक मूर्त्ति, नंद उड़ीसा से पटने उठा लाए थे। और जब खारवेल ने मगध पर चढ़ाई कर शताब्दियों बाद बदला चुकाया तब वे उस मूर्त्ति को वापस ले गए और साथ ही अंग-मगध बादशाही का बहुत सा धन कलिंग को ले गए।

मगध में कई नंद हुए हैं। एक नंद ने अपना संवत् चलाया था जिसे अलबेरूनी ने १०३० ई० के लगभग मथुरा में चलन में पाया। और एक शिलालेख में चालुक्य विक्रमादित्य छठें ने भी १०७० ई० में इस नंद-संवत् का चलन बतलाया है। नंद-संवत विक्रम संवत में ४०० जोड़ देने से निकल आता था, यह गणना अलबेरूनी ने दी है, अर्थात वह विक्रम से ४०० वर्ष पूर्व चला था। यह समय नंदवर्धन का है जो पहला नंद हुआ और महापद्म महा-नंद आदि के पहले हुआ। नंद-संवत् का इस शिलालेख में उल्लेख है। उस संवत् के एक सौ तीसरे वर्ष में एक नहर खोदी गई थी। इस नहर को बढ़ाकर खारवेल कलिंग की राजधानी में ले आए। नंदराज संवत्-कार ही खारवेल-लेखांकित नंदराज हैं यह स्पष्ट है, क्योंकि दो स्थानों पर इनका जिक्र है—एक संवत् के साथ और दूसरे मूर्त्ति मगध उठा लाने के बारे में। समझ पड़ता है कि वे जैन थे, क्योंकि जिन मूर्त्ति अपने यहाँ ले आए थे। ई० सन् के ४५८ वर्ष पहले और विक्रमाब्द से ४०० वर्ष पूर्व जैन धर्म का इतना प्रचार उड़ीसा में था कि मूर्त्तियाँ भगवान् महावीर के निर्वाण के कोई ७५ ही वर्ष बाद वहाँ प्रचलित हो गईं। जैन सूत्रों में लिखा हुआ

है कि हमारे भगवान् श्री महावीरजी स्वयं उड़ीसा गए थे और वहाँ उनके पिता के एक मित्र राज्य कर रहे थे। इस लेख में लिखा है कि कुमारी पर्वत पर अर्थात् खंडगिरि पर, जहाँ यह लेख है, धर्म विजय-चक्र फिरा था अर्थात् जैन धर्म का उपदेश श्रीमहावीर भगवान् ने स्वयं किया था अथवा उनके पूर्व के किसी जिन तीर्थंकर ने उपदेश किया था। वहाँ पहाड़ पर एक काय-निर्षादी अर्थात् जैन स्तूप था जिसमें किसी अर्हत् की हड्डी गड़ी हुई थी। इस पर्वत पर अनेक गुफाएँ और मंदिर, जिन पर पार्श्वनाथ के चिह्न और पादुका हैं, ब्राह्मी अक्षरों के लेखयुक्त खुदे हुए खारवेल या उसके पहले के समय के हैं। जैन साधु वहाँ रहा करते थे, इसका उल्लेख है। इससे यह स्पष्ट है कि यह स्थान एक जैन-तीर्थ और बहुत पुराना है। मराठों के राज्य-काल में भी जैनों ने यहाँ एक नया मंदिर बनाया था। यात्रियों के चढ़ाए हुए बहुत से छोटे छोटे स्तूप या चैत्य यहाँ एक स्थान पर हैं जिसे देव-सभा कहते हैं।

खारवेल ने मगध पर दो बार चढ़ाई की थी। एक बार गोरथ गिरि का गिरिदुर्ग, जो अब 'बराबर' पहाड़ कहलाता है, लिया, और राज-गृह पर हमला कर उसे उन्होंने घेर रखा। इसी समय यवन राजा डिमित (Demitrios) पटने या गया की ओर चढ़ा जा रहा था। खारवेल की वीर-कथा सुन उसने पैर पीछे किए और मथुरा भी छोड़कर भागा। दूसरी बार बृहस्पति मित्र मगधराज को अपने पैरों गिरवाया। इस बार यह पाटलिपुत्र के सुगांगेय महल ही पर अपने हाथियों समेत पहुँच गए थे।

यवन-राज की चढ़ाई की चर्चा पतंजलि व्याकरण भाष्यकार ने भी की है—"अरुणद् यवनः साकेत" और गार्गीसंहिता में लिखा है कि दुष्ट विक्रांत यवन मथुरा साकेत लेता हुआ पटने (कुसुमध्वज) की ओर चलेगा जिससे सब थर्रा उठेंगे। इस शिलालेख से जान पड़ा कि यह यवन-राज डिमिट्रियस था जो यूनानी इतिहासकारों के लेखानुसार हिंदुस्तान छोड़ बल्ख (बैक्ट्रिया) वापस चला गया था। यह

घटना ईसवी सन् के १७५ पूर्व वर्ष की है। यही समय पतंजलि का भी है। इस समय मगध के राजा और पतंजलि के यजमान पुष्यमित्र थे ("पुष्यमित्रं यजामहे")। पुष्यमित्र के बाद उनके लड़के अग्निमित्र भारत के सम्राट् हुए जिन्हें अमरकोष की एक टीका में चक्रवर्त्ती लिखा है। अग्निमित्र के सिक्के की तरह ठीक उसी कोटि और रूप का सिक्का **बहसतिमित्र** का मिलता है। बहसतिमित्र के सिक्के अग्निमित्र के सिक्कों से पहले के माने जाते हैं। बहसतिमित्र की रिश्तेदारी अहिछत्र के राजाओं से थी जो ब्राह्मण थे, यह कोसम-पभोसा के शिलालेख से साबित है। मैंने पुष्यमित्र (जो शुंग वंश के ब्राह्मण थे) और बृहस्पतिमित्र का एक होना बतलाया है। पुष्य नक्षत्र का बृहस्पति मालिक है। इस एकता को योरप के नामी ऐतिहासिकों ने मान लिया है।

बृहस्पतिमित्र मगध का राजा था, यह निश्चित हो गया। इस नाम को पंडित भगवान्लाल इंद्रजी आदि ने **बहुपति सासिन** पढ़ा था। यह भी एक नाम है, इसका पता उन्हें नहीं लग सका था।

जैन ग्रंथों में लिखा है कि मौर्य चंद्रगुप्त के समय में जैन साधुओं और पंडितों की सभा हुई और जो जैन आगम (अंग) खो गए थे, वे फिर से बनाए गए। पर इस उद्धार को बहुत से जैनों ने स्वीकृत नहीं किया। इस लेख में लिखा है कि मौर्य-काल में उच्छिन्न हुए अंग-सप्तिक के चौथे भाग का खारवेल ने पुनरुद्धार कराया था।

जैनों का तपस्या करना भी इस लेख से सिद्ध है। जीव-देह के जैन विज्ञान का भी इसमें उल्लेख है।

खारवेल चेदि वंश में हुए। कलिंग का पूर्व राजवंश उच्छिन्न हो गया था; क्योंकि अशोक ने कलिंग जीत वहाँ अपने एक लाट वाइसराय (उपराज, कुमार) को मुकर्रर किया था। पर बृहस्पतिमित्र के समय के कुछ पहले वहाँ एक नया राजवंश, जिसकी तीसरी पीढ़ी में जवान और बहादुर खारवेलजी थे, कायम हो गया था। चेदि वंश का उल्लेख वेद में आता है। ये बरार (विदर्भ) में रहते थे। वहीं से छत्तीस-

गढ़ महाकोशल होते हुए कलिंग पहुँच गए थे। खारवेल के समय में सातकर्णि महाराज पश्चिम में थे। शिलालेखों में इनके वंश का नाम सातवाहन है जिसे प्राकृत और संस्कृत ग्रंथों में शालवाहन कहते हैं। सातवाहनों के प्रथम शिलालेख ईसवी सन् से २०० वर्ष पूर्व के अक्षरों में अंकित नानाघाट (नासिक प्रदेश) में मिलते हैं।

खारवेल एक वर्ष विजय के लिये निकलते थे और दूसरे वर्ष घर पर रहते, महल आदि बनवाते, दान देते तथा प्रजा-हित के काम करते। दूसरी चढ़ाई की सफलता के बाद इन्होंने राजसूय किया, साल का कर माफ कर दिया और नए हक (अनुग्रह) प्रजा को दिए। बड़ी तेजी से चढ़ाई करते थे। सारे भारतवर्ष में, उत्तरापथ से लेकर पांड्य देश तक इनकी विजय-वैजयंती उड़ गई। इनकी स्त्री ने ठीक ही इन्हें चक्रवर्ती कहा। कलिंग का यह वैसा ही दम भरते थे जैसा आजकल कुछ प्रांतवाले अपने प्रांत का। इनकी रानी ने "कलिंग के साधुओं" के लिये प्रासाद खुदवाया, अपने पति को "कालिंग चक्रवर्त्ती" कहा, अपनी जिनमूर्त्ति को इन्होंने "कालिंग जिन" कहकर उसका उल्लेख किया है।

अचरज की बात है कि जैन ग्रंथों में चेदिराज खारवेल का जिक्र तक नहीं है। पुराणों में जहाँ कोशल के "मेघ" उपाधि-धारी राजाओं का वर्णन है वह शायद इन्हीं "महामेघवाहन" उपाधिवाले खारवेल वंशियों का जिक्र है।

खारवेल-अंकित कलिंग की मरदुम शुमारी

हिंदुओं के राज्य में मनुष्यगणना होती थी जो आजकल की कच्ची-पक्की मरदुम शुमारी से बहुत अच्छी थी। हर थाने अर्थात् ग्रामों के केंद्र और सदर में रजिस्टर, जिसे 'चरित्र' और 'पुस्त' कहते थे, रक्खे रहते थे, पैदाइशी और फौती इंदराज करते हुए आबादी का जोड़ हमेशा तैयार रहता था। यह पल्टन बटोरने तथा कर-विभाग के लिये चलता रक्खा जाता था। इसमें प्रजा के गोधन, भूमि आदि का भी ब्योरा रहता था। यह सब विवरण कौटिलीय

अर्थशास्त्र से मिलता है। यवन एल्ची, मेगास्थिनीज, ने भी लिखा है कि प्रजा के जन्म-मरण का लेखा मौर्य राज्य में तैयार रहता है। इन बातों को न जानते हुए पंडित भगवान्लाल इंद्रजी ने लिखा कि मरदुम शुमारी तो हिंदुस्तान में थी ही नहीं; और खारवेल की प्रजा (प्रकृति) की गिनती, जो राजा के प्रथम राज्यवर्ष के अहवाल में दी हुई है, वे न पकड़ सके। कलिंग उड़ीसा से बड़ा था, अंध्र देश (तैल नदी) तक पहुँचता था। कालिंग प्रजा खारवेल के प्रथम वर्ष में ३५ लाख थी।

एक साधन हमारे पास है जिससे इस गणना को हम जाँच सकते हैं। कोई ७५ या १०० वर्ष पहले, अशोक ने जब कलिंग फतह किया, उस समय एक लाख बंदी और १ ; लाख घायल और खेत रहे सिपाही कलिंग पल्टन के गिने गए। यह अशोक के शिला-लेख में लिखा है। इस से कलिंग की आबादी का हिसाब जोड़ा जा सकता है। जरमन युद्ध-शास्त्रकारों ने हिसाब दिया है (जिसका प्रमाण मैंने अपने अँगरेजी लेख (१९१७) में दिया है) कि आबादी में सैकड़े पीछे १५ मनुष्य देश पर चढ़ाई होने पर, उसकी रक्षा में, लड़ सकते हैं। इस तरह अशोक के समय में कोई ३८ लाख की आबादी कलिंग में होनी चाहिए। इस हिसाब से खार-वेल के राज्य की आबादी ३५ लाख ठीक जान पड़ती है।

लेख-मान

लेख १५ फुट से ऊपर, लंबाई में, और ५ फुट से ऊपर, चौड़ाई में है। कई आदमियों की लेखनियों से खुदाई के लिये लिखा गया है। कई प्रकार के अक्षर हैं।

लेख-भाषा

भाषा पाली से एक दम मिलती है, और इसके प्रयोग जातक तथा बौद्ध पिटक से मिलते हैं। शब्दविन्यास रचयिता की काव्य-कुशलता प्रकट करता है। शब्द तुले हुए हैं। शैली संक्षिप्तता में सूत्र की स्पर्धा करती है।

वैदिक बातें आदि

खारवेल का महाराज्याभिषेक हुआ था। महाराज्याभिषेक वैदिक कर्म है। बृहस्पतिसूत्र में लिखा है कि २४ वर्ष के बाद राज्याभिषेक होना चाहिए। यही इस लेख से भी सिद्ध होता है। जैन होने से राजा ने अश्वमेध न करके राजसूय कर अपना सार्वभौम पद सिद्ध किया। लेख में चेदि वंश को राजर्षि-कुल विनि:सृत कहा है। ब्राह्मणों को अग्निकुंडों से सुसज्जित मकानों का राजा द्वारा देना अंकित है। कल्पवृक्ष के दान में (जिसे खारवेल ने किया) सोने के वृक्ष बना लिए जाते थे; और यह महादान कहलाता था, ऐसा हेमाद्रि ने चतुर्वर्ग-चिंतामणि (दान-खंड) में लिखा है।

राजा वेन और वर्धमान

खारवेल की तुलना वेन से की गई है। यह तुलना अभिविजय के विषय में है। वेन पृथ्वी भर के राजा थे। उन्होंने कानून भी अच्छे बनाए, यह मनुस्मृति में लिखा हुआ है। पर उन्होने जाति-पाँति उठा दी, इससे ब्राह्मण चिढ़ गए। पद्मपुराण में तो उन्हें जैन ही लिखा है। वेन की कीर्त्ति जैनों में, जान पड़ता है, अच्छी रही।

तीर्थंकर महावीर का गृहस्थाश्रमवाला नाम वर्धमान था। जैन पुस्तकों में लिखा हुआ है कि पैदाइश से अभिवृद्धि होने लगी, इसी से वर्धमान नाम पड़ा (अभिधान राजेंद्र)। खारवेल-प्रशस्ति में जो '**वर्धमान-सेसयो वेनाभिविजयो**' है, उसमें **वर्धमान** श्लेषात्मक जान पड़ता है। "जो बचपन (शैशव) से वर्धमान है (या हुआ) और अभिविजय में वेन है (या हुआ)"। श्रीमहावीर स्वामी का वर्धमान नाम सम-सामयिक होना इस से ध्वनित होता है। मालूम रहे कि कोई जैन ग्रंथ इतना पुराना नहीं है, जितना कि यह लेख है।

शिलालेख के सब विषय मैं अँगरेजी में कई बार लिख चुका हूँ। सब को यहाँ लिखने से इस पत्रिका का पूरा अंक भर जायगा या उससे भी अधिक हो जायगा। इस से यहाँ संक्षेप में कुछ कहा गया है। भूलचूक पंडित जन क्षमा करेंगे। शुभं भूयात्।

श्री-खारवेल-प्रशस्ति

संकेत—मूल लेख में मुख्य शब्दों के पहले जगह छुटी हुई है। ऐसे शब्दों को स्थूल अक्षरों में यहाँ छापा जा रहा है। विराम के लिये भी स्थान छूटा है। वह खड़ी पाई से दिखलाया गया है। गलित-प्राय अक्षर कोष्टबद्ध कर दिए गए हैं। उड़ गए हुए अक्षर बिंदियों से सूचित किए गए है।

प्राकृत मूल-पाठ।	**संस्कृतच्छाया।**
(पंक्ति १)	
नमो अरहंतानं [।] नमो सवसिधानं [।] **ऐरेन** महाराजेन **माहामेघवाहनेन चेति-राज**वसवधनेन पसथ-सुभलखने-न चतुरंतलुठितगुनोपहितेन कलि-गाधिपतिना **सिरि खारवेलेन**	नमोऽर्हद्भ्यः [।] नमः सर्व-सिद्धेभ्यः [।] **ऐलेन** महाराजेन **महामेघवाहनेन चेदिराज**-वंशवर्धनेन प्रशस्तशुभलक्षणेन चतु-रन्त-लुठितगुणोपहितेन कलिङ्गाधि-पतिना **श्री क्षारवेलेन**
(पंक्ति २)	
पंदरसवसानि सिरि कडार-सरीर-वता कीडिता कुमारकीडिका [।] ततो लेखरूपगणना-ववहार-विधि-विसारदेन सवविजावदातेन नववसानि योवरजं पसासितं [।] संपुण-चतु-वीसति-वसो तदानि व-धमान-सेसयो वेनाभिविजयो ततिये	पञ्चदशवर्षाणि श्रीकडारशरीर-वता क्रीडिताः कुमारक्रीडाः [।] ततो लेख्यरूपगणनाव्यवहारविधिविशा-रदेन सर्वविद्यावदातेन नववर्षाणि यौवराज्यं प्रशासितम् [।] सम्पूर्ण-चतुर्विंशतिवर्षस्तदानीं वर्धमानशैश-वो वेनाभिविजयस्तृतीये
(पंक्ति ३)	
कलिंगराजवंस - पुरिसयुगे **माहारजा**भिसेचनं पापुनाति [।] अभिसितमतो च पधमे वसे	**कलिङ्ग**राजवंश - पुरुष - युगे **माहाराज्या**भिषेचनं प्राप्नोति [।] अभिषिक्तमात्रश्च प्रथमे वर्षे

प्राकृत मूल-पाठ।	संस्कृतच्छाया।
वात-विहत-गोपुर-पाकार-निवेसनं पटिसंखारयति [।] कलिंगनगरि-[ ] खबीर-इसि-ताल-तडाग-पाडियो च बंधापयति [।] सवुयान-पटिसंठपनं च	वातविहतं गोपुर-प्राकार-निवेशनं प्रतिसंस्कारयति [।] कलिङ्गनगर्याम् खिबीरर्षि* - तल्ल-तडाग-पालीश्च बन्धयति [।] सर्वोद्यानप्रतिसंस्थापनञ्च

(पंक्ति ४)

कारयति [॥] पनतीसाहि सतसहसेहि **पकतियो** च रंजयति [।] दुतियं च वसे अचितयिता सातकंणि पछिमदिसं हय-गज-नर-रध-बहुलं दंडं पठापयति [।] कन्हबेंनां गताय च सेनाय वितासितं मुसिकनगरं [।] ततियं पुन वसे	कारयति [॥] पञ्चत्रिंशद्भिः शतसहस्रैः† **प्रकृतीश्च** रञ्जयति [।] द्वितीये च वर्षे अचिन्तयित्वा सातकर्णिं पश्चिमदेशं‡ हय-गज-नर-रथ-बहुलं दण्डं प्रस्थापयति [।] कृष्णवेणां गतया च सेनया वित्रासितं मूषिकनगरम् [।] तृतीये पुनर्वर्षे

(पंक्ति ५)

गंधव-वेदबुधो दंप-नत-गीत-वादित संदसनाहि उसव-समाज-कारापनाहि च कीडापयति नगरिं	गान्धर्ववेदबुधो दम्प§-नृत्त-गीतवादित्र-सन्दर्शनैरुत्सव-समाज-कारणैश्च क्रीडयति नगरीम् [।]

* अपि-खिबीरस्य तल्ल-तडागस्य

† पञ्चत्रिंशच्छत-सहस्रैः प्रकृतीः परिच्छिद्य परिगणय्य इत्येतदर्थे तृतीया।

‡ दिक्शब्दः पालीप्राकृते विदेशार्थोऽपि।

§ दम्प = डफ इति भाषायां ?

प्राकृत मूल पाठ।	संस्कृतच्छाया।
[।] तथा चवुथे वसे विजाधराधिवासं अहत-पुवं कालिंगपुवराजनिवेसितं......... वितध मकुटसबिलमढिते च निखित-छत-	तथा चतुर्थे वर्षे विद्याधराधिवासम् अहतपूर्वं कालिङ्ग-पूर्वराजनिवेशितं ....वितथ-मकुटान् साधितबिल्मांश्च निक्षिप्त-छत्र-
(पंक्ति ६)	
-भिंगारे हित-रतन-सापतेये सवरठिक **भोजके** पादे वंदापयति [।] पंचमे च दानी वसे **नंदराज**-ति-वस-सत-ओघाटितं तनसुलिय-वाटा पनाडिं नगरं पवेस[य]ति[।] सो........भिसितो च राजसुय [।] संदस-यंतो सवकर-वणं	भृङ्गारान् हृत - रत्न - स्वापतेयान् सर्वराष्ट्रिक **भोजकान्** पादावभिवादयते [।] पञ्चमे चेदानीं वर्षे **नन्दराजस्य** त्रि-शत-वर्षे *अवघट्टितां तनसुलियवाटात् प्रणालीं नगरं प्रवेशयति [।] सो(ऽपि च वर्षे षष्ठे)ऽभिषिक्तश्च राजसूयं सन्दर्शयन् सर्व-कर-पणम्
(पंक्ति ७)	
अनुगह-अनेकानि सतसहसानि विसजति पोरं जानपदं [।] सतमं च वसं पसासतो वजिरघरव[ ]ति घुसित-घरिनीस [-मतुकपद] -पुंना [ति? कुमार] ... .[।] अठमे च वसे महता सेना.......-गोरधगिरिं	अनुग्रहाननेकान् शतसहस्रं विसृजति पौराय जानपदाय [।] सप्तमं च वर्षं प्रशासतो वज्रगृहवती घुषिता गृहिणी [सन्-मातृकपदं प्राप्नोति ?] [कुमारं]......... .... [।] अष्टमे च वर्षे महता* सेना......गोरथ-गिरिं

* महता = महात्मा ? । सेनाग्र समस्यन्तपदस्य विशेषणं वा ।

प्राकृत मूल-पाठ ।	संस्कृतच्छाया ।
(पंक्ति ८)	
घातापयिता **राजगहं** उप-पीडापयति [।] एतिनं च कंमापदान-संनादेन संवित-सेन-वाहनो विपमुंचितु मधुरं अपयातो यवन-राज डिमित........................ [मो ?] यछति [वि].......... पलव . .	घातयित्वा **राजगृह**मुपपीडयति [।] एतेषां च कर्मावदान-संनादेन संवीतसैन्य-वाहनो विप्रमोक्तुं मथुरामपयातो यवनराजः डिमित ....[मो ?]† यच्छति [वि]................ पल्लव . .
(पंक्ति ९)	
कपरुखे हय-गज-रध-सह-यंते सवघरावास-परिवसने स-अगिणठिया [।] सव-गहनं च कारयितुं बम्हणानं जातिं परिहारं ददाति [।] अरहतो.............व... ...न....गिय	कल्पवृक्षान् हयगजरथान् सयन्तॄन् सर्वगृहावास-परिवसनानि साग्निष्ठिकानि [।] सर्वग्रहणं च कारयितुं ब्राह्मणानां जातिं परिहारं ददाति [।] अर्हतः...... ......व... ... . न..... गिया (?)
(पंक्ति १०)	
...[क] . f . मान [ति]* रा[ज]-संनिवासं महाविजयं पासादं कारयति अठतिसाय सत-सहसेहि [।] दसमे च वसे दंड-	...[क] . f . मानति (?) राजसन्निवासं महाविजयं प्रासादं कारयति अष्टात्रिंशता शत-सहस्रैः [।] दशमे च वर्षे दण्ड-
* 'मानवि' भी पढ़ा जा सकता है।	† नवमे वर्षे इत्येतस्य मूलपाठो नष्टोन्ताहतात्तरेषु ।

प्राकृत मूल-पाठ ।

संधी-साम-मयो भरध-वस-पठानं महि-जयनं...ति कारापयति... .... [निरितय] उयातानं च मनि-रतना[नि] उपलभते [।]

(पंक्ति ११)

............मंडं च अवराजनिवेसितं पीथुड-गदभ-नंगलेन कासयति [ि]जनस दंभावनं च तेरसवस-सतिक [ं] तु भिदति तमरदेह-संघातं [।] बारसमे च वसे ...हस...के .ज.सवसेहि वितासयति उतरापथ-राजानो......

(पंक्ति १२)

............मगधानं च विपुलं भयं जनेतो हथी सुगंगीय[ं] पाययति [।] मागधं च राजानं **वहसतिमितं** पादे वंदापयति [।] **नंदराज**-नीतं च कालिंग-जिनं संनिवेसं.........गह-रतनान पडिहारेहि अंगमागध-वसुं च नेयाति [।]

संस्कृतच्छाया ।

सन्धि-साममयो भारतवर्ष-प्रस्थानं मही-जयनं...ति कारयति...... ......[निरित्या ?] उद्यातानां च मणिरत्नानि उपलभते [।]

......*.....मण्डं च अपराजनिवेशितं पृथुल-गर्दभ-लाङ्गलेन कर्षयति जिनस्य दम्भापनं त्रयोदश-वर्ष-शतिकं तु भिनत्ति तामर-देह-संघातम् [।] द्वादशे च वर्षे... ....भिः वित्रासयति उत्तरापथराजान्

............मगधानाञ्च विपुलम्भयं जनयन् हस्तिनः सुगाङ्गेयं प्राययति [।] मागधञ्च राजानं **बृहस्पतिमित्रं** पादावभिवादयते [।] **नन्दराज**नीतञ्च कालिङ्ग-जिन-सन्निवेशं ... .गृहरत्नानां प्रतिहारैराङ्ग-मागध-वसूनि च नाययति [।]

* एकादशे वर्षे इत्येतस्य मूलपाठो नष्टो गलितशिलायाम् ।

प्राकृत मूल-पाठ ।

संस्कृतच्छाया ।

(पंक्ति १३)

...........तु [ ] जठर-लिखिल-बरानि सिहरानि नीवेसयति सत-वेसिकनं परिहारेन [।] अभुतमछरियं च हथि-नावन परीपुरं सव-देन हय-हथी-रतना-[मा]निकं पंडराजा चेदानि अनेकानि मुतमणिरतनानि अहरापयति इध सते।

... .तु जठरोल्लिखितानि वराणि शिखराणि निवेशयति शत-वैशिकानां परिहारेण [।] अद्भुतमाश्चर्यञ्च हस्तिनावां पारिपूरम् सर्वदेयं हय-हस्ति-रत्न-माणिक्यं **पाण्ड्यराजात्** चेदानीमनेकानि मुक्तामणिरत्नानि आहारयति इह शक्तः [।]

(पंक्ति १४)

............सिनो वसीकरोति [।] तेरसमे च वसे सुपवत-विजय-चक-कुमारीपवते अरहिते[य ?]* प-खीण-संसितेहि कायनिसीदीयाय याप-ञावकेहि राजभितिनि चिनवतानि वसासितानि [।] पूजाय रत-उवास-खारवेल-सिरिना जीवदेह-सिरिका परिखिता [।]

............सिनो वशीकरोति [।] त्रयोदशे च वर्षे सुप्रवृत्त-विजय-चक्रे कुमारी-पर्वतेऽर्हिते प्र-क्षीण-*संसृतिभ्यः कायिकनिषीद्यां यापज्ञापकेभ्यः राज-भृतीश्चीर्णव्रताः[एव ?]शासिताः[।]पूजायां रतोपासेन खारवेलेन श्रीमता जीवदेह-श्रीकता परीक्षिता [।]

(पंक्ति १५)

......[सु]कति-समणसुविहितानं (नुं?) च सत-दिसानं(नुं?) ञानिनं तपसि-इसिनं संघियनं

.............सुकृति-श्रमणानां सुविहितानां शतदिशानां तपस्विऋषीणां सङ्घिनां [।]

* पंक्ति के नीचे 'य' ऐसा एक अक्षर मालूम होता है ।

* यप-क्षीण इति वा ।

प्राकृत मूल-पाठ ।	संस्कृतच्छाया ।
(नुं ?) [;] अरहत-निसीदिया समीपे पभारे वराकर-समुथपिताहि अनेक-योजनाहिताहि प. सि. ओ......सिलाहि सिंहपथ-रानिसि [ं]धुडाय निसयानि	अर्हन्निषीद्याः समीपे प्राग्भारे वराकरसमुत्थापिताभिरनेकयोजनाहृताभिः...........शिलाभिः सिंहप्रस्थीयायै राज्ञ्यै सिन्धुडायै निःश्रयाणि
(पंक्ति १६)	
................घंटालक्तो† चतरे च वेडूरियगभे थंभे पतिठापयति [,] पान-तरिया सत सहसेहि [।] **मुरिय**-काल-वोछिंनं च चोयठि-अंग-सतिकं तुरियं उपादयति [।] खेमराजा स वढराजा स भिखुराजा धमराजा पसंतो सुनंतो अनुभवंतो कलाणानि	........घण्टालक्तः [?], चतुरश्च च वैदूर्य्यगर्भान् स्तम्भान् प्रतिष्ठापयति [,] पञ्चसप्तशतसहस्रैः [।] **मौर्य**काल-व्यवच्छिन्नञ्च चतुःषष्टिकाङ्गसप्तिकं तुरीयमुत्पादयति [।] क्षेमराजः स वर्द्धराजः स भिक्षुराजो धर्मराजः पश्यन् शृण्वन्ननुभवन् कल्याणानि
(पंक्ति १७)	
........गुण-विसेस-कुसलो सव-पासंड-पूजको सव-देवायतन-संकारकारको [अ]पति-हत-चकि-वाहिनिबलो चकधुरो गुतचको पवत-चको राजसि-वस-कुल-विनि-श्रितो महा-विजयो राजा **खारवेल-सिरि**	.........गुण-विशेष-कुशलः सर्व-पाषण्डपूजकः सर्व-देवायतन-संस्कारकारकः [अ]प्रतिहत-चक्रि-वाहिनी-बलः चक्रधुरोगुप्त-चक्रः प्रवृत्त-चक्रो राजर्षिवंश-कुल-विनिःसृतो महाविजयो राजा **क्षारवेलश्रीः**

† अथवा-घंटालीण्ह

भाषानुवाद

(१) अरहंतों को नमस्कार। सिद्धों को नमस्कार। ऐर (ऐल) महाराज, महामेघवाहन (महेंद्र), चेदिराज-वंश-वर्धन, प्रशस्त शुभ-लक्षणवाले, चतुरंत पहुँचे हुए गुणोंवाले, कलिंगाधिपति श्रीखारवेल ने

(२) पंद्रह वर्ष तक श्रीकडार (गौर वर्णवाले) शरीर से लड़कपन के खेल (क्रीड़ाएँ) खेले। तिसके बाद, लेख्य (सरकारी हुक्मनामे*), रूप (टकसाल†), गणना (सरकारी हिसाब किताब, आय व्यय‡) कानून (व्यवहार) और धर्म (विधि) (शास्त्रों) में विशारद होकर, सर्व-विद्यावदात (सब विद्याओं से परिशुद्ध), [उन्होंने,] युवराज-पद पर नौ वर्ष तक शासन किया। तब चौबीस वर्ष पूरे हो चुकने पर [आप] जो बचपन ही से वर्धमान हैं, जो अभिविजय में वेन (राज) हैं, तीसरे

(३) पुरुष-युग में (तीसरी पीढ़ी में) कलिंग के राजवंश में, महाराज्याभिषेक को प्राप्त हुए। अभिषेक होते ही, प्रथम (राज्य) वर्ष में, तूफान से गिरे हुए (राजधानी के) फाटक और शहरपनाह की इमारतों की मरम्मत कराई, कलिंग नगरी (राजधानी) में ऋषि खिवीर के ताल तडाग बाँध बँधवाए, सब बागों की मरम्मत

(४) कराई। पैंतीस लाख प्रकृति (रिआया) का रंजन किया। दूसरे वर्ष में, सातकर्णि (राजा) की कुछ परवाह (चिंता) न करते हुए पश्चिम दिशा (पर चढ़ाई करते हुए) घोड़े-हाथी पैदल-रथवाली बड़ी सेना भेजी। कन्हबेना (कृष्णवेणा नदी) पर पहुँची हुई सेना से मूषिक-नगर को बहुत त्रस्त किया। फिर तीसरे वर्ष

* **लेख्य** का यह अर्थ (शासन) कौटिलीय अर्थशास्त्र (१.३१) में देखिए।

† कौ० अर्थशास्त्र, १.३२।

‡ कौ० अ० शा०, १.२८। **'रूप'**, **'लेखा'** और **'गणना'** पर सूत्र थे, ऐसा महावग्ग की टीका से विदित होता है। महावग्ग, १.४९। जैन सूत्रों में लिखा है कि महावीर स्वामी जिनेंद्र का नाम इसलिये **वर्धमान** हुआ कि जन्म ही से उनकी बढ़ती होने लगी थी।

(५) [आप] गंधर्व-वेद के पंडितों ने, दंप (डफ ?) नृत्य, गीत, वादित्र (बाजे) के संदर्शनों (तमाशों) से, उत्सव, समाज (नाटक, दंगल आदि) कराते हुए, नगरी को खेलाया। तथा चौथे वर्ष, विद्याधराधिवास को, जिसे कलिंग के पूर्व राजाओं ने बनवाया था और जो पहले कभी गिरा न था*......†, व्यर्थ जिनके मुकुट हो गए हैं, जिनके जिरहबख्तर दो पल्ले काटकर कर दिए गए हैं, काटकर गिरा दिए गए हैं जिनके छत्र

(६) और भृंगार (राजसी चिह्न सोने चादी गडुए-झारी), छीन लिए गए हैं, रत्न और स्वापतेय (धन) जिनके (ऐसे) सब राष्ट्रिक भोजकों से अपने चरणों में बंदना करवाई। अब पाँचवें वर्ष में, नंदराज के १०३ वर्ष (संवत्) में खोदी गई। नहर को तनसुलिय वाट (सडक या बाड़) से राजधानी के अंदर ले आए। [छठे वर्ष में] अभिषिक्त हो राजसूय दिखलाते हुए कर (टिकस) के सब रुपए

(७) छोड़ दिए,—अनुग्रह‡ (नए हक) अनेकों, लाखों, पौर जानपद को बखशे। सातवें वर्ष में राज्य करते हुए [आप] की गृहिणी वज्र घर (कुल) वाली, धुपिता (नामवाली या 'प्रसिद्ध'), मातृ पदवी को प्राप्त हुई (?)§ [कुमार ?]......आठवें वर्ष में महा...सेना...गोरथ गिरि||

(८) को तोड़कर राजगृह को घेर दबाया। इनके कर्मों के अवदान (वीर-कथा) के सं-नाद से यूनानी राजा (यवनराज) डिमित...(Demetrios) ने अपनी सेना और छकड़े (कमसरियट)

* अहत-पूर्व का अर्थ नया कपड़ा चढ़ाकर भी हो सकता है।

† यहाँ अक्षर गल गए हैं।

‡ अनुग्रह का यह अर्थ कौटिलीय में है।

§ इस वाक्य का पाठ और अर्थ संदिग्ध है।

|| बराबर पहाड़, जो गया के पास है और जिसमें मौर्य चक्रवर्ती अशोक के बनवाए गुफा-मठ हैं, महाभारत में और एक शिलालेख में **गोरथगिरि** के नाम से अंकित है। यह एक गिरि दुर्ग था। इसकी किलअ-बंदी अब भी मौजूद है। मोटी मोटी दीवारों से द्वार और दर्रे बंद हैं।

बटोरते हुए मथुरा त्यागने को पीछे पैर दिए।......नवें वर्ष, [आप, श्रीखारवेल] देते हैं......पत्तों [से भरे हुए]

(९) कल्पवृक्ष*, घोड़े, हाथी, रथ, हाँकनेवालों समेत, मकान और शालाएँ अग्निकुंडों सहित। इन सबको ग्रहण कराने के लिये ब्राह्मणों की जाति को जागीरें दीं। अर्हत के......

(१०) शाही इमारत (राजसंनिवास) **महाविजय** (नामक) प्रासाद आपने अड़तीस लाख (पण, रुपयों) से बनवाया। दसवें वर्ष में, दंड-संधि-साम [नीति-] मय [आपने] मही जय करने भारतवर्ष को प्रस्थान किया......जिन पर चढ़ाई की उनके मणि-रत्न प्राप्त किए।

(११)........†(ग्यारहवें वर्ष में) बुरे राजा (अप-राज) के बनवाए हुए मंड (बाजार या मंडप) को बड़े गदहों के हल से जुतवा डाला, जिन (भगवान्) के प्रति दंभ करानेवाले एक सौ तेरह वर्ष-वाले सीस (तमर) के मूर्त्ति-संघात को तोड़ डाला। बारहवें वर्ष में,...........से उत्तरा-पथ के राजाओं को ख़ूब त्रस्त किया।

(१२)......मगधवालों को एक दम भयभीत करते हुए, हाथियों को सुगांगेय (प्रासाद)‡ पर पहुँचाया, और मगध के राजा बृहस्पति-मित्र§ को अपने पैरों गिरवाया (पैरों में वंदना करवाई)। तथा राजा नंद के ले गए हुए कालिंग जिन मूर्त्ति को...और गृह-रत्नों को ले, बदला चुकाते हुए (प्रतिहारों से) अंग मगध का धन ले आए।

(१३)........भीतर से लिखे (खुदे) हुए सुंदर (या 'बड़े', **वरानि**) शिखर बनवाए, साथ ही सौ कारीगरों को जागीरें दीं।

---

* ये सोने के होते थे। चतुर्वर्ग-चिंतामणि दान कांड, ४। यह महादान में है।

† यहाँ से, अंत तक, प्रति पंक्ति कोई १२ अक्षर पंक्ति के आदि में पत्थर के चप्पड़ के साथ उड़ गए हैं।

‡ मुद्राराक्षस नाटक में नंद और चंद्रगुप्त का महल 'सुगांग' नामक पाटलिपुत्र में कहा गया है।

§ बृहस्पतिमित्र के सिक्के मिलते हैं जो अग्निमित्र के सिक्कों से पहले के माने जाते हैं और उसी तरह के हैं।

अद्भुत आश्चर्य हाथियोंवाले जहाज भरे हुए, सब नजर, हय, हाथी, रत्न, माणिक्य, पांड्य राजा के यहाँ से इस समय अनेक मोती, मणि, रत्न, हरवा लाए, यहाँ पर, इस शक्त (लायक, महाराज) ने

(१४)........सियों को वसी किया। तेरहवें वर्ष में, पूज्य कुमारी पर्वत* पर जहाँ (जैनधर्म का) विजय-चक्र सुप्रवृत्त है, प्रक्षीण-संसृति (जिन्होंने जन्म मरण मिटा डाला है), कायनिषीदी (स्तूप) पर (रहनेवालों) पाप बतलानेवालों (पाप-ज्ञापकों), के लिये व्रत पूरे हो जाने पर मिलनेवाली राजभृतियाँ कायम कर दीं (शासित कर दीं)। पूजा में उपवास पूरा कर खारवेल श्री ने जीव और देह की श्री की परीक्षा कर ली। (जीव देह परख डाला।)

(१५)......सुकृति श्रमण सुविहित शत दिशा के ज्ञानी तपस्वी ऋषि संघी लोगों का......। अर्हत् की निषीदी के पास, पहाड़ पर, अच्छी खानियों से निकाल लाए हुए अनेक योजनों से ले आए गए......पत्थरों से सिंहप्रस्थवाली रानी सिंधुला के लिये निःश्रय...

(१६)......घंटा-युक्त [०] और चार खंभे जिनमें वैदूर्य जड़े हुए हैं, स्थापित किए पचहत्तर लाख [के खर्च] से। मौर्य काल में उच्छिन्न चौसट्टी (चौंसठ अध्यायवाले) अंग सप्तिक का चतुर्थ भाग फिर से प्रस्तुत करवाया इस क्षेमराज ने, वृद्धिराज ने, भिक्षु-राज ने, धर्मराज ने, देखते सुनते अनुभव करते हुए कल्याणों को।

(१७)...........हैं गुण विशेष कुशल, सब मजहबों को इज्जत देनेवाले, सब (तरह के) देव-मंदिरों की मरम्मत करानेवाले, न रुकनेवाले रथ और सैन्यवाले, चक्र (राज्य) के धुर (नेता), गुप्त (रक्षित)-चक्रवाले, प्रवृत्त-चक्रवाले, राजर्षि-वंश-कुल-विनिः-सृत, महाविजय, राजा खारवेलजी ('खारवेल-श्री')॥

---

* यह नाम खंडगिरि उदयगिरि का है जहाँ पर यह लेख है। भुवनेश्वर के पास ये छोटे पहाड़ हैं।

लेख के आदि अंत में एक एक मंगल चिह्न बना हुआ है। पहला बद्ध-मंगल है। दूसरे का नाम अभी नहीं पकड़ा जा सका।